अपने क्षितिज की ओर दृष्टि

दाजी

योगाश्रम शाहजहाँपुर के

स्वर्ण जयंती समारोह के अवसर पर संदेश

बैच 4 – 24-26 फ़रवरी 2026

अपने क्षितिज की ओर दृष्टि

प्रिय मित्रों,

अब तक की अपनी शिक्षाओं का पुनरावलोकन करें –

- 'विभाजित हृदय' में हमने ऐसे हृदय को देखा जो दो दिशाओं में खिंच रहा था, कामना और आकांक्षा की ओर।

- 'उद्देश्य का जागरण' में हमने ऐसे हृदय से मुलाकात की जिसकी गति रुक गई थी – ऊर्जा के अभाव से नहीं बल्कि उद्देश्य के अभाव से।

- 'सुदृढ़ आधार का निर्माण' में हम ऐसे हृदय से मिले जो अपने ही अनुभवों पर विश्वास नहीं कर पा रहा था और अपने भीतर घटित रूपांतरण पर ही संशय कर रहा था।

- 'आसमान छूने का प्रयास' में हमने देखा कि एक हृदय ने अपने ही अंतःक्षेत्र को आसमान समझ लिया था। उसका अहंकार उपलब्धि के चारों ओर जम कर विकास के द्वार को ही बंद कर देता है।

अब हम एक ऐसे हृदय से मिलते हैं जिसका एक अलग घाव है। यह हृदय न तो बँटा हुआ है, न जड़ है, न संशयग्रस्त है, न परिबद्ध है; यह बहुत दुःखी है।

दो अद्वितीय प्रतिभाएँ

दो संगीतज्ञ एक ही गुरु से संगीत सीखते थे। एक के पास वरदान स्वरूप ऐसी आवाज़ थी कि वह पत्थर को भी रुला दे। दूसरे के पास ऐसी तकनीकी निपुणता और साधना की परिपूर्णता थी कि श्रोता विस्मित रह जाते थे। दोनों असाधारण थे। लेकिन दोनों अपने-अपने गुण पर खुश होने के बजाए एक-दूसरे की प्रतिभा को देखकर दुःखी होते थे।

गायक को संगीतवादक की अनुशासनबद्धता से ईर्ष्या थी और संगीतवादक को गायक की सहज गरिमा से। उन दोनों के पास मिलकर सब कुछ था; लेकिन हर एक के भीतर एक अभाव था।

ईर्ष्या का यह अजीब हिसाब है। आपके पास जो है, उसे घटा देती है और जो आपके पास नहीं है उसे जोड़ देती है। चाहे कोष कितना ही भरा क्यों न हो बहीखाते में हमेशा कमी ही दिखती है।

यदि वे अपने-अपने क्षितिज की ओर देखते, अपनी विशिष्ट प्रतिभाओं की सम्भावनाओं को खोजते तो शायद एक दिन वे अपनी अलग-अलग पहचान से ऊपर उठकर उस असीम आसमान में मिलते जहाँ तुलना का भार नहीं रहता। लेकिन इसके लिए आंतरिक कार्य आवश्यक है।

एक दिशा की ओर देखना

'उद्देश्य का जागरण' में हमने गति के दो प्रेरक तत्त्वों का भेद किया था। एक प्रेम से खींचा जाता है, उसका एक गन्तव्य होता है। ऊर्जा किसी दीप्तिमान लक्ष्य की ओर प्रवाहित होती है और शरीर उसका अनुसरण करता है, क्योंकि हृदय पहले ही वहाँ पहुँच चुका होता है। दूसरा तत्त्व दर्द से प्रेरित होता है। उसका कोई गन्तव्य नहीं, केवल

पलायन होता है। ईर्ष्या पूर्णतः वेदना-प्रेरित है लेकिन वह किस दिशा में धकेलती है, इसे हमने अभी तक सूक्ष्मता से नहीं देखा है।

- → इच्छा आगे की ओर खींचती है। उसकी ओर, जिसे आप पाना चाहते हैं।
- → आलस्य आपको स्थिर रखता है, वह आपको गति का कोई कारण नहीं देता।
- → संशय आपको पीछे की ओर खींचता है, उससे दूर जिसे आपने पहले ही पा लिया है।
- → अहंकार आपको एक अंतःक्षेत्र में संकुचित कर देता है।
- → ईर्ष्या आपको एक ही दिशा में खींचती है। वह आपकी दृष्टि को किसी अन्य के क्षितिज पर स्थिर कर देती है।

'विभाजित हृदय' में हमने प्रेय और श्रेय यानी सुखद और कल्याणकारी के प्राचीन भेद को समझा। इच्छा इन दोनों के बीच संघर्ष है – क्या मैं वह चुनूँ जो मुझे अभी संतोष देता है या वह जो मुझे आगे बढ़ने में मदद करेगा? लेकिन ईर्ष्या इस प्रश्न को ही त्याग देती है कि "मेरे लिए क्या श्रेयस्कर है?" वह उसके स्थान पर एक अन्य प्रश्न करती है,"उनके पास वह क्यों है, जो मेरे पास नहीं?" यह अपनी जीवन-स्थिति के प्रति सामान्य असंतोष नहीं है, जो प्रगति का प्रेरक बन सकता है बल्कि यह तुलना-जनित असंतोष है। और तुलना प्रेरित नहीं करती; वह धीरे-धीरे भीतर से क्षरण करती है।

सच्ची आकांक्षा क्षितिज की ओर देखकर कहती है, "आगे बढ़ो।"
ईर्ष्या आसपास देखकर कहती है, "यह तो अन्याय है।"

यदि वे अपने-अपने क्षितिज की ओर देखते, अपनी विशिष्ट प्रतिभाओं की सम्भावनाओं को खोजते तो शायद एक दिन वे अपनी अलग-अलग पहचान से ऊपर उठकर उस असीम आसमान में मिलते जहाँ तुलना का भार नहीं रहता। लेकिन इसके लिए आंतरिक कार्य आवश्यक है।

'उद्देश्य का जागरण' में आलसी व्यक्ति को ऊपर देखने की आवश्यकता है। ईर्ष्यालु व्यक्ति को आसपास देखना त्यागकर अपने ही क्षितिज की ओर देखना चाहिए। दृष्टि की दिशा ही जीवन की दिशा निर्धारित करती है।

अशांति की क्रियावली

शांति का अर्थ कठिनाइयों का अभाव नहीं है; शांति का अर्थ है आंतरिक व्यवस्था का होना। जब चेतना स्थिर होती है, जब आंतरिक जीवन का हर तत्त्व अपने यथोचित स्थान पर स्थित होता है, तब ऐसी शांतचित्तता उत्पन्न होती है जिसे बाह्य परिस्थितियाँ विचलित नहीं कर सकतीं। ईर्ष्या इसी आंतरिक व्यवस्था पर आक्रमण करती है।

संस्कृत के **मात्सर्य** शब्द का तात्पर्य केवल किसी के पास जो है, उसे पाने की चाह रखना ही नहीं है बल्कि दूसरे का उत्कर्ष देखकर दुःखी होना भी है। यह भेद अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। आकांक्षा किसी अन्य की उपलब्धि को देखकर कहती है, "यह सम्भव है। मैं भी परिश्रम करूँगी।" लेकिन ईर्ष्या उसी उपलब्धि को देखकर कहती है, "यह तो मेरा होना चाहिए था। सृष्टि ने मेरे साथ अन्याय किया है।"

ब्रह्माण्डीय अन्याय की यह भावना शांति के स्रोत को ज़हरीला बना देती है, क्योंकि यह अपने सुख का केंद्र खुद से बाहर रखती है। जब मेरी संतुष्टि इस बात पर निर्भर करती है कि मेरे पास दूसरे से अधिक हो, या कम से कम तो न हो, तब मैंने अपने आंतरिक शरण-स्थल की चाबी हर उस व्यक्ति को सौंप दी है जिससे मैं मिलता हूँ। हर किसी की सफलता मेरी नाकामी बन जाती है। हर किसी की खुशी मेरा दुःख बन

शांति का अर्थ कठिनाइयों का अभाव नहीं है; शांति का अर्थ है आंतरिक व्यवस्था का होना। जब चेतना स्थिर होती है, जब आंतरिक जीवन का हर तत्त्व अपने यथोचित स्थान पर स्थित होता है, तब ऐसी शांतचित्तता उत्पन्न होती है जिसे बाह्य परिस्थितियाँ विचलित नहीं कर सकतीं। ईर्ष्या इसी आंतरिक व्यवस्था पर आक्रमण करती है।

जाती है। मैं दूसरों के भाग्य का बंदी बन जाता हूँ और उसकी फिरौती वही शांति है जिसकी मैं खोज कर रहा था।

'सुदृढ़ आधार का निर्माण' में हमने देखा था कि संशय अपने ही प्रमाण गढ़ लेता है। वह अविश्वास के प्रत्येक कारण को चुन-चुनकर देखता है और विश्वास के प्रत्येक कारण की उपेक्षा कर देता है। ईर्ष्या भी इसी प्रकार के कुटिल हिसाब-किताब से कार्य करती है। ईर्ष्यालु मन दूसरे व्यक्ति के हर लाभ को और अपनी परिस्थिति के हर नुकसान को देखता है। वह बड़ी सावधानी से इसका लेखा-जोखा रखता है लेकिन उसमें गड़बड़ी की गई होती है। दूसरी ओर की संपत्तियाँ बढ़ा-चढ़ाकर लिखी जाती हैं और अपनी ओर की संपत्तियाँ या तो घटा दी जाती हैं अथवा पूर्णतः निरस्त कर दी जाती हैं। परिणामस्वरूप बहीखाता हमेशा घाटा ही दिखाता है। क्योंकि उस लेखे-जोखे का उद्देश्य सत्य का आकलन करना नहीं था; उसका उद्देश्य पीड़ा को पोषित करना था।

साधकों के बीच अशांति

एक बात ऐसी है जिसे बहुत कम आध्यात्मिक परंपराएँ खुलकर स्वीकार करती हैं, लेकिन हर आध्यात्मिक समुदाय उसे जानता है – ईर्ष्या आश्रम के द्वार पर समाप्त नहीं होती बल्कि और सूक्ष्म हो जाती है।

'आसमान छूने का प्रयास' में हमने चारीजी के इस विचार को समझा था कि आध्यात्मिकता का क्षेत्र इतना कोमल और ग्रहणशील होता है कि वह अहंकार के लिए उपजाऊ भूमि बन जाता है। यही कोमलता उसे ईर्ष्या के लिए भी उपजाऊ बना देती है। भौतिक संसार में ईर्ष्या के विषय स्पष्ट होते हैं – धन, पद, रूप-रंग और सफलता। आध्यात्मिक संसार में ये विषय अधिक सूक्ष्म हो जाते हैं, लेकिन उनका प्रभाव कम नहीं होता। कौन गुरु के अधिक निकट है? किसकी सिटिंग अधिक समय तक चली? किसकी अवस्था अधिक गहरी लगती है? किसे पहचान मिली, पद मिला या ज़िम्मेदारी दी गई? किसका नाम लिया गया? ये सब आंतरिक संसार के विषय हैं – आध्यात्मिक जीवन के इंद्रिय-विषय।

'सुदृढ़ आधार का निर्माण' में हमने अष्टावक्र की यह चेतावनी प्रस्तुत की थी – **"विषयान् विषवत् त्यज।"** वे कहते हैं कि इंद्रियों के विषयों को ऐसे त्याग दो जैसे विष को त्यागते हैं। यह उद्धरण यहाँ पूरी तरह लागू होता है। बाहरी संसार के भटकाव और संशय से भीतर होने वाली क्षति के अलावा, साधकों के बीच की ईर्ष्या उसी विष का तीसरा रूप दिखाती है।

यह केवल बाहरी **भटकाव** नहीं है, जहाँ संसार आपको स्वयं से दूर खींचता है।
यह केवल **संशय** भी नहीं है, जहाँ मन अपने ही अनुभव को नकार देता है।
यह **तुलना** है, ईर्ष्या से जन्मी हुई तुलना, जो दृष्टि को विकृत करती है और अशांति के बीज बोती है।

आध्यात्मिक समुदाय कभी-कभी दर्पणों के हॉल जैसा बन सकता है – तुलना का स्थान, जहाँ आप अपनी यात्रा से अधिक दूसरों की यात्रा के प्रति सजग हो जाते हैं। भीतर देखने में सहायता करने के स्थान पर, वही समुदाय ऐसा स्थान बन सकता है जहाँ आप निरंतर इधर-उधर, दूसरों की ओर देखने लगते हैं।

यह क्रम बिलकुल सही है। 'आसमान छूने का प्रयास' में हमने देखा था कि किस प्रकार यदि अहंकार पर नियंत्रण नहीं रखा जाता है तो वह साधक में आध्यात्मिक पात्रता का भाव जगाता है। जब वह पात्रता न मिलने पर उसे निराशा होती है, जब उम्मीद करने पर भी वही पात्रता उसे न मिलकर किसी अन्य को मिल जाती है तब उसकी ईर्ष्या भड़क उठती है। एक बार जब ईर्ष्या भड़क गई तो वह तुलना पैदा करती है, तुलना से प्रतिस्पर्धा पैदा होती है और प्रतिस्पर्धा से वही राजनीति पैदा होती है जिसे आध्यात्मिक जीवन को खत्म करना चाहिए था। फिर गर्व छत बनाता है और ईर्ष्या उस घर को जलाकर राख कर देती है।

मूल कारण

ईर्ष्या वास्तव में कभी भी किसी दूसरे व्यक्ति के बारे में नहीं होती। वह बिना परख के

उस यकीन के बारे में है कि आप जो हैं और आपके पास जो है, वह पर्याप्त नहीं है। यह अपर्याप्तता का एक घाव है और यह दूसरे व्यक्ति की सफलता को एक दर्पण के रूप में उपयोग करती है जिसमें वह अपनी ही कमी को देखता है।

यही वह घाव है, जिसकी हमने 'सुदृढ़ आधार का निर्माण' में बात की थी लेकिन दृष्टिकोण अलग था। वह अभ्यासी बहन जिसने ग्यारह वर्षों तक ध्यान किया था, अपने स्वयं के रूपांतरण पर ही विश्वास नहीं कर सकी। उसने कहा, "क्या यह वास्तविक है?" ईर्ष्यालु साधक भी ऐसी ही गलती करता है। उसने जो पाया है, उस पर संदेह करने के बजाय, यह मानने से ही इनकार कर देता है कि वह पर्याप्त है।

संशय कहता है, "जो मैंने अनुभव किया है, वह वास्तविक नहीं है।"

ईर्ष्या कहती है, "जो मुझे प्राप्त हुआ है, वह पर्याप्त नहीं है।

एक परिस्थिति में विश्वास की कमी है तो दूसरी में संतोष का अभाव। दोनों ही परिस्थितियाँ उसकी आत्मा को उस स्थिति में स्थिर होने से रोक देती हैं, जो उसे पहले ही प्राप्त हो चुकी है।

ईर्ष्या अहंकार की परछाई, उसका अभिन्न साथी है। 'आसमान छूने का प्रयास' में हमने अहंकार को पहचान के एक पौधाघर के रूप में वर्णित किया था। उसकी परछाई अर्थात् ईर्ष्या खुले आकाश में किसी दूसरे वृक्ष को अपने से ऊँचा बढ़ते हुए देखना बर्दाश्त नहीं कर पाती। लेकिन यह ईर्ष्या वास्तव में उस दूसरे वृक्ष के बारे में नहीं होती। वह उस छत के बारे में होती है – उस काँच के घेरे के बारे में, जिसे अहंकार ने स्वयं

ईर्ष्या वास्तव में कभी भी किसी दूसरे व्यक्ति के बारे में नहीं होती। वह बिना परख के उस यकीन के बारे में है कि आप जो हैं और आपके पास जो है, वह पर्याप्त नहीं है। यह अपर्याप्तता का एक घाव है और यह दूसरे व्यक्ति की सफलता को एक दर्पण के रूप में उपयोग करती है जिसमें वह अपनी ही कमी को देखता है।

निर्मित किया था और अब वह उसे स्वीकार नहीं कर सकता।

इसी कारण दूसरे व्यक्ति के पास जो वस्तु है उसे प्राप्त कर लेने से ईर्ष्या का निदान नहीं हो सकता क्योंकि लक्ष्य-रेखाएँ निरंतर आगे खिसकती जाती हैं। वह व्यक्ति जो किसी और के पद से ईर्ष्या करता है, उसी पद को प्राप्त कर लेने पर, किसी अन्य व्यक्ति से ईर्ष्या करने लगेगा। घाव वस्तु के अभाव के कारण नहीं है; घाव उस मान्यता में है कि वही एक वस्तु उसे पूर्ण बना देगी।

शाम की सफ़ाई का हार्टफुलनेस अभ्यास इसी बात को सीधे तौर पर सम्बोधित करता है। जब हम प्रतिदिन शाम को बैठकर दिन भर के संस्कारों को पीछे से निकाल देते हैं तब हम केवल घटनाओं को ही नहीं बल्कि उनसे जुड़ी अपनी व्याख्याओं को भी निकाल रहे होते हैं। सहकर्मी की पदोन्नति तो मात्र एक घटना थी। उसे सुनते ही आपके हृदय में उठने वाली जलन आप ही की व्याख्या थी जो आपके घाव से पोषित हुई तथा आपकी ही मान्यता ने आपको महसूस कराया कि किसी और का लाभ आपकी हानि है।

लेकिन यहाँ एक कठिनाई है और यह उसी बात को दोहराती है, जिसे हमने 'विभाजित हृदय' में देखा था। सफ़ाई वही हटाती है जिसे हृदय छोड़ने के लिए तैयार होता है। जब किसी प्रवृत्ति को भीतर ही भीतर सँजोकर रखा गया हो, जब मन का कोई हिस्सा अदृश्य लगाव के साथ उसे थामे रहता हो, तब सफ़ाई में प्रतिरोध आता है। ईर्ष्या उन छापों में से एक है जिसे निकालना सबसे कठिन होता है क्योंकि यह स्वीकार करना कि आप ईर्ष्यालु हैं, लज्जाजनक प्रतीत होता है। हम अपनी क्रोध की, आलसी होने की, यहाँ तक कि संशय करने की प्रवृत्ति को भी स्वीकार कर लेते हैं लेकिन ईर्ष्या की प्रवृत्ति का क्या? वह कहना कि "मैं उस व्यक्ति की आध्यात्मिक दशा से ईर्ष्या करता हूँ," इसमें विनम्रता की आवश्यकता होती है लेकिन ईर्ष्यालु अहंकार झुकने को तैयार ही नहीं होता। यह घाव छिपा रह जाता है, क्योंकि उसे देखने का अर्थ है यह मान लेना कि हमारी आत्म-छवि खंडित है। इस प्रकार वह घाव वर्ष-दर-वर्ष भीतर ही भीतर गहरा होता जाता है – जहाँ केवल शाम की सफ़ाई भी कभी-कभार नहीं पहुँच पाती; ऐसा

इसलिए नहीं है क्योंकि तकनीक अपर्याप्त है, बल्कि इसलिए कि हृदय अभी भी उसे छोड़ने को तैयार नहीं है।

शांति को क्या स्थिर करता है

संतोष न तो समर्पण करना है और न ही कम को हार मानकर स्वीकार करना। यह इस बात का गहन बोध है कि जो आपको दिया गया है, वही आपकी यात्रा के लिए आवश्यक है; किसी और की यात्रा के लिए नहीं, बल्कि आपकी यात्रा के लिए।

बीज को वृक्ष से ईर्ष्या नहीं होती। वह पूरी तरह से बीज बनकर स्वयं वृक्ष बनता है। दूसरे लोग जो बन गए हैं, उसे देखकर इस प्रक्रिया को तेज़ नहीं किया जा सकता। इसे तो केवल जिया जा सकता है, चरण-दर-चरण, धैर्य के साथ और इस भरोसे के साथ कि ब्रह्मांड को संचालित करने वाली बुद्धिशाली चेतना ने आपके भीतर जो रखा है, उसमें कोई गलती नहीं की है।

'उद्देश्य का जागरण' में हमने जापानी अवधारणा ***इकीगाई*** पर बात की थी यानी अस्तित्व में होने का कारण, सुबह उठने का कारण। जिस व्यक्ति को अपना **इकीगाई** मिल जाता है, वह तुलना नहीं करता। तुलना तब होती है जब उद्देश्य खोजा नहीं जाता बल्कि उधार लिया गया होता है। आप दूसरों के पास जो है उससे ईर्ष्या इसलिए करते हैं, क्योंकि आपने अभी तक वह नहीं खोजा है जो विशेष रूप से आपका है। उधार लिया हुआ घाव भी उधार लिया हुआ उद्देश्य बन जाता है – आप अपने जीवन की पटकथा को किसी और के जीवन की पटकथा से मापते रहते हैं क्योंकि आपने अभी अपनी पटकथा नहीं लिखी है।

संतोष न तो समर्पण करना है और न ही कम को हार मानकर स्वीकार करना। यह इस बात का गहन बोध है कि जो आपको दिया गया है, वही आपकी यात्रा के लिए आवश्यक है; किसी और की यात्रा के लिए नहीं, बल्कि आपकी यात्रा के लिए।

जब ध्यान गहन होता जाता है, तब ईर्ष्यालु मन के साथ कुछ अद्भुत घटित होता है। वह देखने लगता है कि हर व्यक्ति अपने ही संस्कारों, अपनी संचित छापों और नियति द्वारा गढ़े मार्ग पर चल रहा है। जो किसी अन्य का लाभ प्रतीत होता है, सम्भव है कि वही उसकी सबसे बड़ी कसौटी हो। जो आपकी हानि प्रतीत होती है, वही आपका सबसे प्रभावशाली शिक्षक हो। ब्रह्मांड कोई प्रतिस्पर्धा नहीं है; वह तो एक विद्यालय है और प्रत्येक विद्यार्थी का अलग-अलग पाठ्यक्रम है।

यदि उन दोनों संगीतज्ञों ने इसे समझा होता, तो वे जान जाते कि उनकी प्रतिभाओं के बीच कोई प्रतिस्पर्धा नहीं थी। उनका स्वर और तकनीकी निपुणता दोनों एक ही संगीत की अभिव्यक्तियाँ थे; दोनों एक-दूसरे के बिना अधूरे थे और उनमें से प्रत्येक दूसरे की उपस्थिति से समृद्ध होता था। वे प्रतिद्वंद्वी नहीं थे, वे उस तालमेल के दो हिस्से थे, जो केवल साथ होने पर ही सम्भव था।

हृदय जो अपनी गहराई को जानता है

शांति तब लौटती है जब आप किसी और के जीवन को देखना छोड़कर अपना जीवन जीना आरंभ करते हैं। कलम पहले से ही आपके हाथ में है। पृष्ठ पहले से ही आपके सामने खुला है। अब जो बचा है वह है, बिना आसपास के पृष्ठ पर दृष्टि डाले केवल उसे लिखने की इच्छाशक्ति रखना जो आपका अपना है।

बाबूजी ने सबसे विनम्र व्यक्ति का वर्णन उस व्यक्ति के रूप में किया है जो एक राजा से भी अधिक समृद्ध जीवन जी सकता है – एक ऐसा हृदय, जो 'आश्चर्यों के आश्चर्य'

शांति तब लौटती है जब आप किसी और के जीवन को देखना छोड़कर अपना जीवन जीना आरंभ करते हैं। कलम पहले से ही आपके हाथ में है। पृष्ठ पहले से ही आपके सामने खुला है। अब जो बचा है वह है, बिना आसपास के पृष्ठ पर दृष्टि डाले केवल उसे लिखने की इच्छाशक्ति रखना जो आपका अपना है।

को अपने भीतर छिपाए रखता है, बिना किसी को उसका आभास कराए। ऐसा हृदय उन लोगों के भाग्य से ईर्ष्या नहीं करता जिन्हें संसार 'महान' मानता है – इसलिए नहीं कि उसने उस प्रवृत्ति को दबा दिया है, बल्कि इसलिए कि उसने अपने भीतर इतनी गहनता की अनुभूति का आस्वादन कर लिया होता है कि दूसरों की बाह्य उपलब्धियाँ उसके लिए महत्त्वहीन हो जाती हैं। जब आप यह जान लेते हैं कि आपके पास कभी उसका अभाव था ही नहीं जिसके बारे में आपने सोचा था तब घाव भरने लगते हैं। आप बस गलत दिशा में देख रहे थे।

जिस हृदय ने अपनी ही गहनता का आस्वादन कर लिया है, वह किसी और की सतही उपलब्धियों की लालसा नहीं करता। ध्यान में पर्याप्त समय तक बैठें, अपने अस्तित्व में इतनी गहराई तक उतरें कि आपको वहाँ वह मिल जाए जो किसी और के पास नहीं है एवं जिसे आपसे कोई छीन नहीं सकता। उस स्थान पर पहुँचने के बाद, ईर्ष्या दबी नहीं रहती बल्कि उसे पैदा होने का कोई कारण ही नहीं मिलता।

आइए, संक्षेप में देखें

- 'विभाजित हृदय' में हमने सीखा कि इच्छा हमें तब तक विभाजित करती रहती है जब तक हम विवेकपूर्ण चयन करना नहीं सीख लेते।

- 'उद्देश्य का जागरण' में हमने देखा कि जड़ता हमें तब तक रोके रखती है जब तक हम भीतर की अग्नि को प्रज्वलित करके अपने उद्देश्य को नहीं खोज लेते।

- 'सुदृढ़ आधार का निर्माण' में संशय हमें भीतर से तब तक क्षीण करता है जब तक हम उसे पहचान कर अपने अनुभवों पर भरोसा करना नहीं सीख लेते।

- 'आसमान छूने का प्रयास' में अहंकार हमें घेर लेता है और विनम्रता हमें मुक्त करती है।

- 'अपने क्षितिज की ओर दृष्टि' में हम सीखते हैं कि ईर्ष्या हमारे आंतरिक दिशा-सूचक को आसपास के भटकावों में लगा देती है जिससे वह लक्ष्य से हट जाता है; और इस तरह किसी और की सफलता हमें आहत करती है। ईर्ष्या हमारी अपनी वास्तविकता से उत्पन्न पीड़ा नहीं है, बल्कि तुलना से पैदा हुआ विकार है।

मनुष्य के भीतर पाँच विष हैं और प्रत्येक हमें लक्ष्य से दूर ले जाता है –

इच्छा कहती है, "मुझे वह चाहिए जो वहाँ है।"
आलस्य कहता है, "मैं वहाँ तक नहीं पहुँच सकता, जहाँ मुझे होना चाहिए।"
संशय कहता है, "जहाँ मैं पहुँचा हूँ, वह वास्तविक नहीं है।"
अहंकार कहता है, "जहाँ मैं पहुँचा हूँ, वह मेरा है।"
ईर्ष्या कहती है, "वे जहाँ पहुँचे हैं, वहाँ मुझे होना चाहिए था।"

इन पाँचों का मारक एक ही शांतपूर्ण क्रांति है – पूरी तरह से, बिना किसी संकोच के, साहस के साथ अपने हृदय में, अपने श्वास में और इस जीवन में स्थित होना जो केवल आपको दिया गया है, किसी और को नहीं – उन कारणों के लिए जिन्हें केवल आपकी अपनी यात्रा ही उजागर करेगी।

अपने क्षितिज पर दृष्टि रखें और साहस के साथ अपने इस अनूठे मार्ग पर चलें।

प्रेम और प्रार्थनासहित,
कमलेश

योगाश्रम शाहजहाँपुर के स्वर्ण जयंती समारोह के अवसर पर संदेश
बैच 4 – 24-26 फ़रवरी 2026

दाजी के साथ मास्टरक्लास

आप किसी भी समय हार्टफुलनेस ध्यान का आरम्भ कर सकते हैं। दाजी के साथ तीन सत्रों की मास्टरक्लास श्रृंखला से जुड़ें जिसमें वे हार्टफुलनेस मार्ग के लाभ को साझा करते हैं और यह स्पष्ट करते हैं कि हार्टफुलनेस रिलैक्सेशन, ध्यान, सफ़ाई और प्रार्थना को अपनी दिनचर्या में कैसे समाहित किया जाए। सभी मास्टरक्लास पूर्णतः निःशुल्क हैं।

https://heartfulness.org/global/masterclass/

हार्टफुलनेस अभ्यास

हार्टफुलनेस के अभ्यासों को जानें – रिलैक्सेशन, ध्यान, सफ़ाई और प्रार्थना करना सीखें।

https://heartfulness.org/in-en/heartfulness-practices/

heartfulness

purity weaves destiny